* श्रीकैलासपतये नमः *

# श्रीमूलरामायणम्।





सुमनोपाह्व 'साहित्यभूषण' श्रीरामनाथ-

लालकृतभाषानुवादालंकृतम्।

भार्गवपुस्तकालयाध्यक्षेण

स्वकीये

भार्गवभूषणयंत्रालये मुद्रयित्वा प्रकाशितञ्च।

सं० १९८६

श्रीगणेशाय नमः ।

# मूल रामायणम्

* भाषाटीकासहितम् *



(१)

जयति रघुवंशतिलकः कौशल्याहृदयनन्दनोरामः ।
दशवदननिधनकारी दाशरथिःपुंडरीकाक्षः ॥

टीका—रघुवंश के तिलक, कौशल्या के हृदय को आनन्द देनेवाले, रावण का नाश करनेवाले दशरथ के पुत्र कमलसमान नेत्रवाले भगवान रामचन्द्र की जय हो ।

(२)

कूजंतं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥

टी०—कवितारूपी डाली पर बैठकर मधुर स्वर में राम राम (जैसे मधुर शब्द) बोलनेवाले वाल्मीकिरूप कोकिल को नमस्कार करता हूँ ।

( ३ )

वाल्मीकेर्मुनिसिंहस्य कवितावनचारिणः
शृण्वन् रामकथानादं को न याति परां गतिम् ।

टी०—कवितारूपी वनमें भ्रमण करनेवाले [illegible] (मुनि) सिंह के रामकथारूपी नाद (हुंकार) सुनकर [illegible] न पावे ऐसा कौन है ? (कोई नहीं)।

( ४ )

यः पिबन्सततं रामचरितामृतसागरम् ।
अतृप्तस्तं मुनिं वन्दे प्राचेतसमकल्मषम् ॥

टी०—जो सदैव रामचरितरूपी अमृत के सागर को पीते भी कभी तृप्त न हुये, ऐसे पापरहित वाल्मीकि मुनि की वन्दना करता हूँ।

( ५ )

गोष्पदीकृतवारीशं मशकीकृतराक्षसम् ।
रामायणमहामालारत्नं वंदेऽनिलात्मजम् ॥

टी०—जिसने समुद्र को गौ के खुर और राक्षसों को [illegible]

के समान कर दिखाया, उस रामायणरूपी महामाला के श्रेष्ठ रत्न ( वायुपुत्र ) हनुमानजी को मैं वन्दना करता हूँ ।

( ६ )

अंजनीनन्दनं वीरं जानकीशोकनाशनम् ।
कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लङ्काभयङ्करम् ।

टी०—अंजनीनन्दन, सीताजी का शोक दूर करनेवाले, बन्दरोंके स्वामी, अक्षयकुमार को मारनेवाले, तथा सम्पूर्ण लंकापुरी को भयभीत कर देनेवाले वीर हनुमान जी को मेरा नमस्कार है ।

( ७ )

उल्लंघ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं यः शोक वह्निं जनकात्मजायाः । आदाय तेनैव ददाह लङ्कां नमामि तं प्रांजलिरांजनेयम् ॥

टी०—जिसने कौतुकपूर्वक समुद्र के जलको लाँघकर सीताजी की शोकरूपी अग्नि ले, उसी से लंका को जलाया उस अंजनिपुत्र हनुमान्‌जीको मैं हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ ।

( ८ )

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां

वरिष्ठम् । वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ॥

टी०—मन और मारुत ( हवा ) के समान वेगवान्, जितेन्द्रिय; बुद्धिमानों में श्रेष्ठ वायुपुत्र वानरों की मण्डली में श्रेष्ठ भगवान् राम के दूत श्री हनुमानजी को मैं सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ ।

( ६ )

श्रीराघवं दशरथात्मजमप्रमेयं सीतापतिं रघुकुलान्वयरत्नदीपम् । आजानुबाहुमरविन्द-दलायताक्षं रामं निशाचरविनाशकरं नमामि ।

टी०—श्रीराघव, दशरथ के पुत्र अप्रमेय, सीतापति रघुकुलके रत्न-दीप, आजानुबाहु अरविन्द दल के समान आयत चक्षुवाले निशाचारों के नाशक भगवान् श्रीरामचन्द्र को मेरा नमस्कार है ।

( १० )

वेदवेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे ।
वेदः प्राचेतसादासीत् साक्षाद्रामायणात्मना ॥

टी०—वेद से जाने जावें, ऐसे परब्रह्म, दशरथ के पुत्ररूपमें

उत्पन्न हुए, तब साक्षात् उन वेदों कोही वाल्मीकि महाराज ने रामायण के रूपमें श्लोकबद्ध किया ।

( ११ )

शृण्वन् रामायणं भक्त्या यः पाद पदमेव वा ।
स याति ब्रह्मणः स्थानं ब्रह्मणा पूज्यते सदा ॥

टी०—जो भक्तिपूर्वक रामायण के किसी श्लोक का एक चरण भी सुन लेता है वह ब्रह्म लोक को जाता है और सदैव ब्रह्मा की भांति उसकी पूजा होती है ।

( १२ )

यः कर्णाञ्जलिसंपुटैरहरहः सम्यक् पिबत्यादरा
द्वाल्मीकेर्वदनारविंदगलितं रामायणाख्यं मधु ।
जन्मव्याधिजराविपत्तिमरणैरत्यंतसोपद्रवं, संसारं
स विहाय गच्छति पुमान् विष्णोः पदं शाश्वतम् ।

टी०—जो मनुष्य ध्यान से कान लगाकर प्रतिदिन श्रीवाल्मीकि मुनिके मुखरूपी कमल से निकलते हुये रामायणरूपीमधु (शहद) को भली भाँति पीता है, वह जन्म व्याधि जरा मरण इत्यादि अनेकानेक उपद्रवों और दुःखों से पूर्ण इस संसार को छोड़ कर विष्णु के शाश्वतपद को प्राप्त होता है ।

( १३ )

तदुपगतसमाससन्धियोगं सममधुरप्रणतार्थ-
वाक्यबद्धम् । रघुवरचरितं मुनिप्रणीतं दशशिर
सश्च वधं निशामयध्वम् ।

टी०—जिसमें समास, सन्धि इत्यादि का भली भांति संयोग है और जो नम्र, मधुर एवं सम अर्थवाले वाक्यों से पूर्ण है। बाल्मीकि मुनिप्रणीत ऐसे रामचरित और रावण वधको ध्यान पूर्वक सुनो।

( १४ )

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्त
कांजलिम् । वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं
नमतराक्षसांतकम् ॥

टी०—जहाँ जहाँ रामभजन होता है वहाँ वहाँ हाथ जोड़े प्रेमाश्रु पूर्ण नेत्र किये हुये, राक्षसों का अन्त करनेवाले हनुमानजी उपस्थित रहते हैं ऐसे रामभक्त हनुमान को नमस्कार करो।

( १५ )

वाल्मीकिगिरिसंभूता रामसागरगामिनी ।
पुनातु भुवनं पुण्या रामायणमहानदी ॥

टी०—वाल्मीकिरूपी पर्वतसे उत्पन्न होकर रामरूपी सागर की ओर जानेवाली रामायण रूपी पवित्र महानदी ( गङ्गा ) त्रिभुवन को पवित्र करती है ।

[ १६ ]

जितं भगवता तेन हरिणा लोकधारिणा ।
अजेन विश्वरूपेण निर्गुणेन गुणात्मना ॥

टी०—जगत को धारण करनेवाले जन्मरहित, विश्वरूप निर्गुण एवं गुणात्मा हरि भगवान् ने सब जीतलिया है ।

[ १७ ]

आमिषीकृतमार्तण्डं गोष्पदीकृतवारिधिम् ।
तृणीकृतदशग्रीवमाञ्जनेयं नमाम्यहम् ॥

टी०—सूर्य को निगलनेवाले, समुद्रको गोपदके समान कर देनेवाले, रावणको तृण के समान बना देनेवाले, अंजनिपुत्र महावीर को नमस्कार है ।

( १८ )

आंजनेयमतिपाटलाननं कांचनाद्रिकम-

नीयविग्रहम् । पारिजाततरुमूलवासिनं भावयामि पवमाननंदनम् ॥

टी०—कांचन पर्वत के समान ( वर्णयुक्त ) कमनीय (सुन्दर) शरीरवाले, पारिजातवृक्षके मूल में निवास करनेवाले, पाटलानन, आंजनेय का ध्यान करता हूँ ।

( १९ )

श्लोकसारससंकीर्णं सर्गकल्लोलसंकुलम् ।
काण्डग्राहमहामीनं वन्दे रामायणार्णवम् ॥

टी०-श्लोकरूपी सारसों से संकीर्ण सर्ग [ काव्य में अध्याय वा परिच्छेद की जगह प्रायः सर्ग शब्द व्यवहृत होता है ] रूपी कल्लोल से युक्त, काण्डरूपी ग्राह और बड़ी मछलियों से भरे हुये रामायण रूपी समुद्र की वन्दना करता हूं ।

( २० )

रामं रामानुजं सीतां भरतं भरतानुजम् ।
सुग्रीवं वायुसूनुं च प्रणमामि पुनः पुनः ॥

टी०—श्रीराम, लक्ष्मण, सीता, भरत, शत्रुघ्न, सुग्रीव और हनुमान को बारम्बार प्रणाम करता हूं ।

इति कुशलवयोर्मंगलस्तवं पठित्वा मूलरामायणं पठेत् ।



# अथ मूलरामायणप्रारम्भः ।



( १ )

तपःस्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम्
नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुंगवम् ॥१

टी०—तप और स्वाध्याय में निरत, बुद्धिमानों श्रेष्ठ, तपस्वी नारद से मुनि श्रेष्ठ वाल्मीकि पूछते हैं।

( २ )

कोन्वस्मिन् सांप्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान् ॥धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रतः॥

टी०—इस समय इस लोक में गुणवान्, वीर्यवान, धर्मज्ञ, अपने व्रत में दृढ़ और सत्यवादी कौन है !

( ३ )

चारित्रेण च को युक्तः सर्वभूतेषु को हितः ।
विद्वान् कः कः समर्थश्च कश्चैकः प्रियदर्शनः ॥

टी०—चरित्र सम्पन्न कौन है? कौन समस्त संसार का हित करनेवाला है? विद्वान्, समर्थ और जिसका दर्शन सबके लिये सुखदायी है वह कौन है?

( ४ )

आत्मवान् को जितक्रोधो द्युतिमान् कोऽनसूयकः।
कस्य बिभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे॥

टी०—आत्मवान्, क्रोध को जय करनेवाला तेजस्वि ईर्ष्या, द्वेष हीन और युद्धमें क्रुद्ध होने पर देवता भी जिससे डरें, ऐसा कौन है?

( ५ )

एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं परं कौतूहलं हि मे।
महर्षे त्वं समर्थोऽसि ज्ञातुमेवं विधं नरम्॥

टी०—इन बातों को जानने की मुझे बड़ी इच्छा और उत्कण्ठा है। हे महर्षे! आप ऐसे मनुष्य को जाननेमें समर्थ हैं।

( ६ )

श्रुत्वा चैतत् त्रिलोकज्ञो वाल्मीकेर्नार- दो वचः।

श्रूयतामिति चामंत्र्य प्रहृष्टो वाक्य मब्रवीत् ॥

टी०—वाल्मीकि मुनि की यह बात सुन, त्रिलोक-ज्ञानी नारद ने ' सुनिये ' ऐसा कहकर कहना आरंभ किया।

( ७ )

बहवो दुर्लभाश्चैव ये त्वया कीर्तिता गुणाः।
मुनिर्वक्ष्याम्यहं बुद्ध्या तैर्युक्तः श्रूयतां नरः ॥

टी०—हे मुनि ! आपने जिन गुणों के सम्बन्ध में पूछा है, वे संसार में बहुत दुर्लभ हैं तथापि उन गुणों से युक्त नर की बात विचार कर कहता हूँ सुनो।

( ८ )

इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः।
नियतात्मा महावीर्यो द्युतिमान् धृतिमान् वशी ।

टी०—इक्ष्वाकु वंशमें उत्पन्न रामही ऐसे पुरुष हैं जो जन-श्रुत ( संसार, प्रसिद्ध ) नियतात्मा, वीर्यवान्, धैर्यवान् और जितेन्द्रिय हैं।

( ९ )

बुद्धिमान् नीतिमान् वाग्मी श्रीमान् शत्रुनिवर्हणः।
विपुलांसो महाबाहुः कंबुग्रीवो महाहनुः ॥

टी०—वह राम बुद्धिमान्, नीतिवान्, पंडित, श्रीमान्, शत्रुओं को नाश करनेवाले चौड़े स्कंध एवं बड़ी भुजावाले बड़ी ठुड्डी औ शंख के समान सुन्दर गर्दनवाले हैं ।

( १० )

महोरस्को महेष्वासो गूढजत्रुररिंदमः ।
आजानुबाहुः सुशिराः सुललाटः सुविक्रमः ॥

टी०—वे विस्तीर्ण हृदय, प्रचण्ड धनुषयुक्त, गूढ़जत्रु शत्रुविनाशी, आजानुबाहु [ जानु, पैर और जंघेके जोड़ तक जिसकी भुजाएँ लम्बी हों ] पराक्रमी एवं सुन्दर मस्तक तथा दीर्घ ललाटवाले हैं ।

( ११ )

समः समविभक्तांगः स्निग्धवर्णः प्रतापवान् ।
पीनवक्षा विशालाक्षो लक्ष्मीवाञ्छुभलक्षणः ॥

टी०—उनके सब अङ्ग जैसे होने चाहिये, वैसे ही हैं, उनका वर्ण चिकना है। वे श्रीसम्पन्न शुभलक्षणों से युक्त तथा प्रतापी हैं, उनकी आँखें बड़ी बड़ी एवं छाती पुष्ट तथा चौड़ी हैं।

( १२ )

धर्मज्ञः सत्यसंधश्च प्रजानां च हिते रतः।
यशस्वी ज्ञानसम्पन्नः शुचिर्वश्यः समाधिमान्॥

टी०—वे धर्मज्ञ, सत्यवादी, प्रजा के हित में संलग्न, यशस्वी, ज्ञानी, पवित्र, समाधिमान् और (अपने नम्र स्वभाव के कारण शीघ्र) वश में हो जानेवाले हैं।

( १३ )

प्रजापतिसमः श्रीमान् धाता रिपुनिषूदनः।
रक्षिता जीवलोकस्य धर्मस्य परिरक्षिता॥

टी०—प्रजापति के समान ऐश्वर्य-सम्पन्न धाता (सृष्टि की रचना और पालन करनेवाली शक्ति) शत्रु-विनाशकारी, जीवों के रक्षक तथा धर्म की रक्षा करनेवाले हैं।

( १४ )

रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता।

वेदवेदांगतत्त्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः ॥

टी०—( वह ) अपने ( क्षात्र ) धर्म की मर्यादा का पालन करनेवाला, स्वजनों ( भक्तों तथा कुटुम्बियों ) की रक्षा करनेवाला, वेद वेदांग के तत्त्वों में पारगामी तथा धनुर्विद्या में पूर्ण पंडित हैं।

( १५ )

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान् प्रतिभानवान् ।
सर्वलोकप्रियः साधुरदीनात्मा विचक्षणः ॥

टी०—वह सम्पूर्ण शास्त्रों के अर्थ और तत्व का ज्ञानी, स्मृतिमान्, प्रतिभाशाली, सबका प्रिय, साधु, अदीनात्मा जिसकी आत्मा दीन ( कमजोर न हो ) और पण्डित हो।

[ १६ ]

सर्वदाऽभिगतः सद्भिः समुद्र इव सिंधुभिः ।
आर्यः सर्वसमश्चैव सदैव प्रियदर्शनः ॥

टी०—जैसे नदियों से समुद्र संयुक्त रहता है, वैसे ही [ वह ] आर्य और समदर्शी है तथा उसका दर्शन सबको सुखकारी है।

( १७ )

स च सर्वगुणोपेतः कौशल्याऽऽनंदवर्द्धनः ।
समुद्र इव गांभीर्ये धैर्येण हिमवानिव ॥

टी०—वह सर्वगुण युक्त, कौशल्या के आनन्द को बढ़ानेवाला, समुद्र तुल्य गंभीर और धीरता में हिमालय के समान है।

( १८ )

विष्णुना सदृशो वीर्ये सोमवत्प्रियदर्शनः ।
कालाग्निसदृशः क्रोधे क्षमया पृथिवीसमः ॥

टी०—चन्द्रमा के समान सबको उसका दर्शन प्रिय है। वह वीर्य एवं बल में विष्णु के सदृश, कालाग्नि के समान क्रोधी तथ पृथ्वी के समान क्षमाशाली है।

( १९ )

धनदेन समस्त्यागे सत्ये धर्म इवापरः ।
तमेव गुणसम्पन्नं रामं सत्यपराक्रमम् ॥

टी०—दान में कुबेर, सत्य में दूसरा धर्मराज इन गुणों से युक्त ( जगत् में ) सत्य पराक्रम राम है।

( २०, २१, २२,

ज्येष्ठं श्रेष्ठगुणैर्युक्तः प्रियं दशरथः सुतम् ।

प्रकृतीनां हितैर्युक्तं प्रकृतिप्रिय काम्यया ॥
यौवराज्येन संयोक्तुमैच्छत्प्रीत्या महीपतिः ।
तस्याऽभिषेकसंभारान् दृष्ट्वाभार्याथकैकयी ॥
पूर्वं दत्तवरा देवी वरमेनमयाचत ।
विवासनं च रामस्य भरतस्याभिषेचनम् ॥

टी०—सब पुत्रों में बड़े, प्रकृति के हित में लीन, प्रजाप्रिय राम को राजा दशरथ ने, प्रजा के हित के लिये युवराज बनाने का विचार किया। राम ने अभिषेक की तैयारी देख, पूर्वकाल में [ राजा से ] वर पाई हुई दशरथ की प्यारी रानी कैकेयी ने उनसे राम के निर्वासन और भरत के राज्याभिषेक का वरदान माँगा।

( २३ )

स सत्यवचनाद्राजा धर्मपाशेन संयुतः ।
विवासयामास सुतं रामं दशरथः प्रियम् ॥

टी०—सत्य वचन से धर्म बन्धन में बँधे हुए राजा ने अपने प्रिय पुत्र राम को निर्वासित किया।

( २४ )

स जगाम वनं वीरः प्रतिज्ञामनुपालयन् ।

पितुर्वचननिर्देशात् कैकेय्याः प्रिय कारणात् ॥

टी०—इस वीर रामने कैकेई की भलाई तथा प्रतिज्ञा का पालन करने के लिये पिता की आज्ञा मान वन को प्रस्थान किया।

( २५ )

तं व्रजन्तं प्रियो भ्राता लक्ष्मणोऽनुजगाम ह।
स्नेहाद्विनयसम्पन्नः सुमित्रानन्दवर्द्धनः ॥

टी०—स्नेह और विनय सम्पन्न, सुमित्रा को आनन्द बढ़ानेवाले, प्यारे भाई लक्ष्मण ने भी भाई को वन जाते देख, स्नेह वश उनका अनुगमन किया।

( २६-२७ )

भ्रातरं दयितो भ्रातुः सौभ्रात्रमनुदर्शयन्।
रामस्य दयिता भार्या नित्यं प्राणसमाहिता ॥
जनकस्य कुले जाता देवमायेव निर्मिता।
सर्वलक्षणसम्पन्ना नारीणामुत्तमा वधूः ॥

टी०—वह लक्ष्मण भाई को प्रिय और अपना भ्रातृत्व प्रदर्शन करने वाला था। राम की भार्या सदैव जिनके प्राण समान थी। वह जनककुलोत्पन्न, देवमायानिर्मित, सब लक्षणों से सम्पन्न नारियों में उत्तम वधू थी।

( २८ )

सीताप्यनुगता रामं शशिनं रोहिणी यथा ।
पौरैरनुगतो दूरं पित्रा दशरथेन च ॥

टी०—सीता ने भी राम का अनुगमन उसी प्रकार किया, जैसे रोहिणी चन्द्रमा का अनुगमन करती है । पुरवासी लोगों तथा पिता दशरथने भी राम का थोड़ी दूर तक साथ दिया ।

( २९ )

शृंगवेरपुरे सूतं गंगाकूले व्यसर्जयत् ।
गुहमासाद्य धर्मात्मा निषादाधिपतिं प्रियम् ॥

टी०—शृंगवेरपुर में गंगा के किनारे पहुँचकर राम ने सारथी को बिदा किया और निषादों के राजा, धर्मात्मा एवं प्रिय गुहराज से मिले ।

( ३०, ३१ )

गुहेन सहितो रामो लक्ष्मणेन च सीतया ।
ते वनेन वनं गत्वा नदीस्तीर्त्वा बहूदकाः ॥३०॥

चित्रकूटमनुप्राप्य भरद्वाजस्य शासनात् ।
रम्यमावसथं कृत्वा रममाणा वने त्रयः ॥ ३१ ॥

टी०—गुह, लक्ष्मण और सीता के साथ राम वन के बाद वन तथा बड़ी बड़ी नदियों को पार कर भरद्वाज की आज्ञा से चित्रकूट में सुन्दर निवासस्थान बना, वन में रमण करने लगे ।

( ३२, ३३, ३४ )

देवगंधर्वसंकाशास्तत्र ते न्यवसन् सुखम् ।
चित्रकूटं गते रामे पुत्रशोकातुरस्तदा ॥
राजा दशरथः स्वर्गं जगाम विलपन् सुतम् ।
गते तु तस्मिन्भरतो वसिष्ठप्रमुखैर्द्विजैः ॥
नियुज्यमानो राज्याय नैच्छद्राज्यं महाबलः ।
सजगाम वनं वीरो रामपादप्रसादकः ॥

टी०—इस प्रकार देव, गंधर्व आदि के समान वे तीनों वहाँ रहने लगे । उधर राम के चित्रकूट जाते ही पुत्र के वियोग से शोकातुर हो विलाप करते हुए राजा दशरथ स्वर्ग को गये । उनके देहावसान के पश्चात् वसिष्ठादि मुख्य मुख्य ब्राह्मणों ने राज्य ग्रहण करने के लिये भरत से अनुरोध किया । महावीर भरत ने राज्य के

प्रति अनिच्छा प्रगट करके रामचरण का प्रसाद पाने के लिये वन को प्रस्थान किया।

( ३५, ३६, ३७ )

गत्वा तु स महात्मानं रामं सत्यपराक्रमम्।
अयाचद्भ्रातरं राममार्यभावपुरस्कृतः॥
त्वमेव राजा धर्मज्ञ इति रामं वचोऽब्रवीत्।
रामोऽपि परमोदारः सुमुखः सुमहायशाः॥
न चैच्छत् पितुरादेशाद्राज्यं रामो महाबलः।
पादुके चास्य राज्याय न्यासं दत्वा पुनः पुनः॥

टी०—भरत ने आर्य भाव को दृष्टिपथ में रख कर पराक्रमी रामचन्द्रजी से याचना की कि हे धर्मज्ञ! आपही वस्तुतः राजा हैं। तब परमोदार सुमुख, महायस्वी रामचन्द्र ने पिता की आज्ञा पालन करना अपना धर्म समझ राज्य से अनिच्छा प्रगट की और भरत को बहुत कुछ नीचा ऊँचा समझाकर राज्य के लिये अपनी पादुका [ खड़ाऊँ ] देदी।

( ३८ )

निवर्तयामास ततो भरतं भरताग्रजः।
सकाममनवाप्यैव रामपादावुपस्पृशन्॥

टी०—राम ने भरत को लौटने की आज्ञा दी, तब अपनी कामना को सफल न देख भरत ने राम के चरणों को स्पर्श करके बिदा ली।

( ३९,४० )

नन्दिग्रामेऽकरो राज्यं रामागमनकांक्षया।
गते तु भरते श्रीमान् सत्यसंधो जितेन्द्रियः॥
रामस्तु पुनरालक्ष्य नागरस्य जनस्य च।
तत्रागमनमेकाग्रो दण्डकान् प्रविवेश ह॥

टी०—राम के आगमन की आकांक्षा से पूर्ण भरत नन्दि ग्राम में निवास कर राज्य करने लगे। उनके चलेजाने के बाद सत्य संध, श्रीमान् एवं जितेन्द्रिय रामचन्द्र ने वहाँ नगरवासियों का आगमन देख, दण्डकारण्य में प्रवेश किया।

( ४१ )

प्रविश्य तु महारण्यं रामो राजीवलोचनः।
विराधं राक्षसं हत्वा शरभंगं ददर्श ह॥

टी०—राजीवलोचन राम ने महारण्य में प्रवेश कर विराधराक्षस का वध किया एवं शर भंग ऋषि को देखा।

( ४२,४३ )

सुतीक्ष्णं चाप्यगस्त्यं च अगस्त्यभ्रातरं तथा ।
अगस्त्यवचनाच्चैव जग्राहैन्द्रं शरासनम् ॥
खड्गं च परमप्रीतस्तूणी चाक्षयसायकौ ।
वसतस्तस्य रामस्य वने वनचरैः सह ॥

टी०—वहाँ सुतीक्ष्ण, अगस्त्य, एवं अगस्त्य के भाई इत्यादि के दर्शन हुये। अगस्त्य की आज्ञा से राम ने इन्द्र धनुष, तलवार, तरकस और बाण धारण किये और वनचरों के साथ रहने लगे ।

( ४४, ४५ )

ऋषयोऽभ्यागमन्सर्वे वधायासुररक्षसाम् ।
स तेषां प्रतिशुश्राव राक्षसानां तदा वने ॥
प्रतिज्ञातश्च रामेण वधः संयति रक्षसाम् ।
ऋषीणामग्निकल्पानां दण्डकारण्य वासिनाम् ॥

टी०—वहाँ सम्पूर्ण ऋषि, राक्षसों के वध के लिए अनुरोध करने को रामचन्द्र के पास आये तब रामने, दण्डकारण्य निवासी अग्नि के समान तेजस्वी ऋषियों के सामने राक्षसों का वध करने की प्रतिज्ञा की।

( ४६ )

तेन तत्रैव वसता जनस्थाननिवासिनी ।
विरूपिता शूर्पणखा राक्षसी कामरूपिणी ॥

टी०— रामने, वहाँ रहने वाली, कामरूपिणी, राक्षसी शूर्पणखा को विरूपिणी कर दिया ।

( ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, )

ततः शूर्पणखावाक्यादुद्युक्तान् सर्वराक्षसान् ।
खरं त्रिशिरसं चैव दूषणं चैव राक्षसम् ॥
निजघान रणे रामस्तेषां चैव पदानुगान् ।
वने तस्मिन्निवसता जनस्थाननिवासिनाम् ॥
राक्षसानिह तान्यासन् सहस्राणि चतुर्दश ।
ततो ज्ञातिवधं श्रुत्वा रावणः क्रोधमूर्च्छितः ॥
सहायं वरयामास मारीचं नाम राक्षसम् ।
वार्यमाणः सुबहुशो मारीचेन स रावणः ॥
न विरोधो बलवता क्षमो रावण तेन ते ।
अनादृत्य तु तद्वाक्यं रावणः कालचोदितः ॥

जगाम सह मारीचस्तस्याश्रम पदं तदा ।
तेन मायाविना दूरमपवाह्य नृपात्मजौ ॥

टी०—इसके बाद, शूर्पणखा द्वारा प्रेरित खर त्रिशिरा और दूषणादि राक्षसों को सेना सहित मारा तथा जनस्थाननिवासी चौदह हजार राक्षसों का वध किया । अपनी जाति का इस प्रकार नाश होते हुए सुनकर रावण क्रोध से मूर्च्छित हो गया और सहायता के लिए मारीच नामक राक्षस को बुलाया । उसने अनेक प्रकार से समझाकर कहा कि हे रावण ! बलवान् के साथ विरोध करना उचित नहीं है, तथापि कालप्रेरित रावण ने उसकी बात न मानी और उसके साथ राम के आश्रम के निकट गया । वहाँ जाकर वह मायावी मारीच वहाँ आकर राजादशरथके पुत्र राम और लक्ष्मण को दूर ले गया ।

( ५३, ५४ )

जहार भार्यां रामस्य गृध्रं हत्वा जटायुषम् ।
गृध्रंच निहतं दृष्ट्वा हृतां श्रुत्वा च मैथिलीम् ॥
राघवः शोक संतप्तो विललापाकुलेन्द्रियः ।
ततस्तेनैव शोकेन गृध्रं दग्ध्वा जटायुषम् ॥

टी०—उधर रावण जटायु नामक गिद्ध को मार कर रामचन्द्र की पत्नी को हर ले गया गिद्ध को मरा हुआ देख एवं सीता का हरण सुन। कर शोक से संतप्त हो राम विलाप करने लगा पश्चात् उसी शोच में जटायु को जलाकर परम पद दिया।

मार्गमाणो वने सीतां राक्षसं संददर्श ह।
कबंधं नाम रूपेण विकृतं घोरदर्शनम्॥

टी०—सीता को वन में ढूँढ़ते हुये महा भयंकर विचित्र रूपवाले कबंध नामक राक्षस को देखा।

( ५६ )

तं निहत्य महाबाहुर्ददाह स्वर्गतश्च सः।
स चास्य कथयामास शबरीं धर्मचारिणीम्॥

टी०—महाबाहु राम ने उसे मार कर जला दिया। वह राक्षस स्वर्ग को गया और उसीने धर्मचारिणी शवरी का हाल कहा।

( ५७ )

श्रमणां धर्मनिपुणामभिगच्छेति राघवः।
सोऽभ्यगच्छन् महातेजः शबरीं शत्रुसूदनः॥

टी०—उसने कहा कि हे रावण ! वह धर्मनिपुण और श्रमित

है, उसके पास जाइये तब महातेजस्वी, शत्रु विनाशकारी राम शवरी के पास गया।

शवर्या पूजितः सम्यग्रामो दशरथात्मजः।
पंपातीरे हनुमता संगतौ वानरेण ह॥
( ५८ )

टी०—वहाँ शवरी द्वारा भली प्रकार आदृत हुये दशरथात्मज राम पंपातीर में हनुमान बंदर से मिले।

( ५९ )

हनुमद्वचनाच्चैव सुग्रीवेण समागतः।
सुग्रीवाय च तत्सर्वं शंसद्रामो महाबलः॥

टी०—हनुमान के कहने से सुग्रीव से मिले और उस से महाबली रामचन्द्रजी ने अपना हाल कहा।

( ६०, ६१

आदितस्तद्यथावृत्तं सीतायाश्च विशेषतः।
सुग्रीवश्चापि तत्सर्वं श्रुत्वा रामस्य वानरः॥
चकार सख्यं रामेण प्रीतश्चैवाग्निसाक्षिकम्।
ततो वानरराजेन वैरानुकथनं प्रति॥

टी०—उन्होंने आरंभ में अपना सब वृतान्त कहा और सीता हरण का हाल विशेष रूपसे वर्णन किया। सब हाल सुन, सुग्रीव ने भी प्रसन्नचित्त से अग्नि को साक्षी देकर मित्रता की तदनन्तर वानरराज सुग्रीव ने वालि के साथ अपने वैर का हाल कहना आरंभ किया।

( ६२ )

रामायावेदितं सर्वं प्रणयाद् दुःखितेन च।
प्रतिज्ञातं च रामेण तदा वालिवधं प्रति॥

टी०-परम दुखी सुग्रीव ने बड़ी नम्रता पूर्वक राम से अपना सब हाल कहा। तब राम ने वालि को मारने की प्रतिज्ञा की।

( ६३ )

वालिनश्च बलं तत्र कथयामास वानरः।
सुग्रीवः शंकितश्चासीन्नित्यं वीर्येण राघवे॥

टी०—तब सुग्रीव ने वालि के बल का वर्णन किया और उसे सन्देह ही रहा कि यह वालि को कैसे मार सकेंगे!

( ६४ )

राघव प्रत्ययार्थं तु दुंदुभेः कायमुत्तमम् ।
दर्शयामास सुग्रीवो महापर्वतसन्निभम् ॥

टी०—राम के प्रत्ययार्थ पर्वत के समान दुँदुभि राक्षस का शरीर सुग्रीव ने दिखाया ॥

( ६५ )

उत्स्मयित्वा महाबाहुः प्रेक्ष्य चास्थि महाबलः ।
पादांगुष्ठेन चिक्षेप सम्पूर्णं दशयोजनम् ॥

टी०—आजानुबाहु राम ने, मुसकराते हुये, उस महा बलवान् राक्षस की हड्डी को पैर के अँगूठे से उठा दश योजन पर फेंक दिया ।

( ६६ )

बिभेद च पुनस्तालान् सप्तैकेन महेषुणा ।
गिरिं रसातलं चैव जनयन् प्रत्ययं तदा ॥

टी०—और एक ही बाण से सात ताल के वृक्षों, पर्वत एवं रसातल को भेद कर सुग्रीव के हृदय में दृढ़ विश्वास उत्पन्न कर दिया कि हम बालि को मारने में पूर्णरूप से समर्थ हैं।

( ६७ )

ततः प्रीतमनास्तेन विश्वस्तः स महाकपिः ।
किष्किंधां राम सहितो जगाम च गुहां तदा ॥

टी०—उस पराक्रम को देख, विश्वास करके सुग्रीव बड़ी प्रसन्नता से राम के साथ किष्किन्धा नामक गुफा के द्वार पर गया।

( ६८ )

ततोऽगर्जद्धरिवरः सुग्रीवो हेमपिंगलः ।
तेन नादेन महता निर्जगाम हरीश्वरः ॥

टी०—वहां जाकर सुवर्ण समान पीतवर्णवाले, वानर श्रेष्ठ सुग्रीव ने गर्जना किया ! उस भयंकर गर्जन को सुनकर बन्दरों का राजा बालि किष्किंधा से निकल आया।

[ ६९ ]

अनुमान्य तदा तारां सुग्रीवेण

समागतः । निजघान च तत्रैव शरेणै-
केन राघवः ॥

टी०—तारा की बात न मान, उसका अनादर करके वालि, सुग्रीव के साथ युद्ध करने आया, किन्तु एकही बाण से उसे राम ने मार डाला ।

( ७०

ततः सुग्रीववचनाद्धत्वा वालिनमाहवे ।
सुग्रीवमेव तद्राज्ये राघवः प्रत्यपादयत् ॥

टी०—बालि की मृत्युके पश्चात, वचनबद्ध होने के कारण रामने वह राज्य सुग्रीव को ही दिया ।

( ७१ )

स च सर्वान् समानीय वानरान् वानरर्षभः ॥
दिशः प्रस्थापयामास दिदृक्षुर्जनकात्मजाम् ॥

टी०—कपिराज सुग्रीव ने, दशो दिशाओं में वन्दरों को सीता का पता लगाने के लिए भेजा ।

( ७२ )

ततो गृध्रस्य वचनात्संपातेर्हनुमान् बली ।
शतयोजनविस्तीर्णं पुप्लुवे लवणार्णवम् ॥

टी०—संपाति गिद्ध से पता पाकर महाबलवान् हनुमान् सौ योजन तक विस्तृत खारे समुद्र को लांघ गये ।

( ७३ )

तत्र लंकां समासाद्य पुरीं रावणपालिताम् ।
ददर्श सीतां ध्यायन्तीमशोकवनिकागताम् ॥

टी०—हनुमान् ने रावण द्वारा रक्षित लंका में जाकर अशोक वन में राम का ध्यान करती हुई सीता को देखा ।

( ७४—७५ )

निवेदयित्वाऽभिज्ञानं प्रवृत्तिं विनिवेद्य च ।
समाश्वास्य च वैदेहीं मर्दयामास तोरणम् ॥
पंचसेनाग्रगान् हत्वा सप्तमंत्रिसुतानपि ।
शूरमक्षं च निष्पिष्य ग्रहणं समुपागमत् ॥

टी०—सीता से राम का सम्पूर्णसमाचार एवं प्रवृत्ति कही और सीताको आश्वासन देकर रणमें पांच सेनापतियां, सात मंत्री पुत्रों एवं परमशूर अक्षयकुमार को मार स्वयं भी पकड़ गये ।

( ७६, ७७ )

अस्त्रेणोन्मुक्तमात्मानं ज्ञात्वा पैतामहाद्वरात् ।
मर्दयन्राक्षसान्वीरो मंत्रिणस्तान् यदृच्छया ॥
ततो दग्ध्वा पुरीं लंकामृते सीतां च मैथिलीम् ।
रामाय प्रियमाख्यातुं पुनरायान्महाकपिः ॥

टी०—फिर श्रेष्ठ ब्रह्मपाश से अपने को मुक्त देख, इच्छानुसार मंत्रियों एवं बड़े बड़े राक्षसों को डराया । इसके पश्चात्, सीता के निवासस्थान के अतिरिक्त निःशेष लंका को जलाकर, सीता जी का वृत्तान्त कहने के लिए लौटे ।

( ७८ )

सोऽभिगम्य महात्मानं कृत्वा रामं प्रदक्षिणम् ।
न्यवेदयदमेयात्मा दृष्टा सीतेति तत्त्वतः ॥

टी०—महात्मा राम के पास जा उनकी प्रदक्षिणा करके अतुल बलशाली हनुमान् ने सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया ।

( ७९ )

ततः सुग्रीवसहितो गत्वा तीरं महोदधेः ।
समुद्रं क्षोभयामास शरैरादित्यसन्निभैः ॥

टी०—तब राम, सुग्रीव सहित समुद्र तटपर गये और सूर्य समान तेजवाले बाणों से समुद्र को डराया ।

( ८० )

दर्शयामास चात्मनं समुद्रः सरितांपतिः।
समुद्रवचनाच्चैव नलः सेतुमकारयत् ॥

टी०—नदियों का स्वामी समुद्र हाथ जोड़ कर सामने आया तब उसके कहने से नल द्वारा राम ने पुल तैयार कराया।

( ८१ )

तेन गत्वा पुरीं लंकां हत्वा रावणमाहवे।
रामःसीतामनुप्राप्य परां व्रीडामुपागमत ॥

टी०—उस सेतुसे लंका में जा, रावण को मार सीता को पाकर राम लज्जित से हुये।

( ८२ )

तामुवाच ततो रामः परुषं जनसंसदि।
अमृष्यमाणा सा सीता विवेश ज्वलनं सती ॥

टी०—रामने सभामें सीताको कटु वचन कहे जिसके सहन करने में असमर्थ हो परमसती सीता ने अग्नि में प्रवेश किया।

( ८३–८४ )

ततोग्निवचनात्सीतां ज्ञात्वा विगतकल्मषाम्।

कर्मणा तेन महता त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥
सदेवर्षिगणं तुष्टं राघवस्य महात्मनः ।
बभौ रामः संप्रहृष्टः पूजितः सर्वदैवतैः ॥

टी०—तब अग्नि के वचन से सीता जी को निष्पाप समझा। राम के इस कर्मसे चराचर, देव ऋषि सब प्रसन्न हुए एवं प्रसन्न-हृदय राम देवताओं से पूजित होकर सुशोभित हुये।

( ८५ )

अभिषिच्य च लंकायां राक्षसेन्द्रं विभीषणम् ।
कृतकृत्यस्तदा रामो विज्वरः प्रमुमोद ह ॥

टी०—लंका में राक्षस श्रेष्ठ विभीषण को राजतिलक देकर संताप से मुक्त हो कृतकृत्यएवं आनन्दित हुये।

( ८६ )

देवताभ्यो वरं प्राप्य समुत्थाप्य च वानरान् ।
अयोध्यां प्रस्थितो रामःपुष्पकेण सुहृद्वृतः ॥

टी०—देवताओं से वर पा, वानरों तथा प्रियजनों के साथ पुष्पकविमान से अयोध्या को प्रस्थान किया।

( ८७ )

भरद्वाजाश्रमं गत्वा रामः सत्यपराक्रमः ।
भरतस्यान्तिके रामो हनुमन्तं व्यसर्जयत् ॥

टी०—सत्यपराक्रम रामने भरद्वाज के आश्रम पर पहुँच कर हनुमान् को भरत के पास भेजा ।

( ८८ )

पुनराख्यायिकां जल्पन् सुग्रीवसहितस्तदा ।
पुष्पकं तत्समारूह्य नन्दिग्रामं ययौ तदा ॥

टी०—पुनः आपस में बातचीत करते हुये, सुग्रीव के साथ पुष्पक विमान पर बैठकर नन्दिग्राम को गये ।

( ८९ )

नन्दिग्रामे जटां हित्वा भ्रातृभिः सहितोऽनघः ।
रामः सीतामनुप्राप्य राज्यं पुनरवाप्तवान् ॥

टी०—नन्दिग्राम में, भाइयों के साथ, जटा को त्याग, निष्पाप रामने सीता को पाकर पुनः राज्य ग्रहण किया ।

( ९०, ९१ )

प्रहृष्टमुदितो लोकस्तुष्टः पुष्टः सुधार्मिकः ।
निरामयो ह्यरोगश्च दुर्भिक्षभयवर्जितः ॥
न पुत्रमरणं केचिद् द्रक्ष्यन्ति पुरुषाः क्वचित् ।
नार्यश्चाविधवा नित्यं भविष्यंति पतिव्रताः ॥

टी०—उस राज्य में लोग हृष्ट, पुष्ट, सन्तुष्ट, सुखी, धार्मिक, नहात्मची नीरोग और दुर्भिक्षादि भयवर्जित हैं । पिता के सामने

वहाँ पुत्रकी मृत्यु नहीं होती। स्त्रियाँ सौभाग्यवती एवं पतिव्रता हैं।

( १२, १३ )

न चाग्निजं भयं किंचिन्नाप्सु मज्जन्ति जन्तवः।
न वातजं भयं किंचिन्नापि ज्वरकृतं तथा॥
न चापि क्षुद्भयं तत्र न तस्करभयं तथा।
नगराणि च राष्ट्राणि धनधान्ययुतानि च॥

टी०—वहाँ न तो अग्नि का भय, न जल में डूबने का भय, न वायुसम्बन्धी किसो तरह का भय, न ज्वरादि का भय, न पेट की चिन्ता, और न चोर का भय है। नगर और राष्ट्र सब धनधान्यपूर्ण है।

( १४-१५-१६ )

नित्यं प्रमुदिताः सर्वे यथा कृतयुगे तथा।
अश्वमेधशतैरिष्ट्वा तथा बहुसुवर्णकैः॥
गवां कोट्ययुतं दत्वा विद्वद्भ्यो विधिपूर्वकम्।
असंख्येयं धनं दत्वा ब्राह्मणेभ्यो महायशाः॥
राजवंशाञ्छतगुणान् स्थापयिष्यति राघवः॥
चातुर्वर्ण्यंच लोकेस्मिन्स्वे स्वे धर्मे नियोक्ष्यति॥

टी०—सब, सदैव सतयुग की भाँति सुखी हैं और सौ अश्वमेध यज्ञ कर सुवर्ण युक्त कोटि गौओं के विधिपूर्वक विद्वानों

तथा असंख्यद्रव्य ब्राह्मणों को देकर, राम हजारों राजाओं के वंश को स्थापित करेंगे और चारों वर्णों को अपने २ धर्मसे युक्त करेंगे।

( ९७ )

दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च।
रामो राज्यमुपासित्वा ब्रह्मलोकं प्रयास्यति॥

टी०—ग्यारह हजार वर्षतक राज्य कर राम ब्रह्मलोक को जायेंगे।

( ९८ )

इदं पवित्रं पापघ्नं पुण्यं वेदैश्च संमितम्।
यः पठेद्रामचरितं सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

टी०—यह पवित्र, पापनाशक, पुण्यकारी और वेदतुल्य रामचरित को जो पढ़ेगा, वह सब पापों से मुक्त होजायगा।

( ९९ )

एतदाख्यानमायुष्यं पठन् रामायणं नरः।
सपुत्रपौत्रः सगणः प्रेत्य स्वर्गे महीयते॥

टी०—रामचरितसम्बन्धी यह कथा आयु को बढ़ाने वाली है। इसके पढ़ने से मनुष्य पुत्र-पौत्रों से सुशोभित होता है और मरने के बाद स्वर्ग को जाता है।

( १०० )

पठन् द्विजो वागृषभत्वमीयात्स्यात् क्षत्रियो भूमि

पतित्वमीयात् । वणिग्जनः पुण्यफलत्वमीयाज्जन-
श्च शूद्रोपि महत्वमीयात् ॥

टी०—इसको पढ़ने से ब्राह्मण विद्वान् होता है क्षत्रिय भूमि का स्वामी होता है, वैश्य व्यापार में सफल होता है तथा शूद्र का महत्व बढ़ जाता है ।

( १०१ )

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् ।
एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥

टी० —रामचरित शतकोटि विस्तीर्ण है और उसका एक एक अक्षर पुरुषों के पाप को नाश करनेवाला है ।

( १०२ )

रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे ।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ॥

टी०—रघुनाथ अनाथनाथ, सीतापति रामचन्द्र को नमस्कार है ।

इति मूलरामायणम् ।

इति श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि-
काव्ये बालकाण्डे नारदोक्तरामायण-
संक्षेपो नाम प्रथमः सर्गः ।

पं० रामतेजशास्त्रिणा संशोधितम् ।

बाबू काशीप्रसाद भार्गव द्वारा भार्गवभूषण प्रेस. काशी में मुद्रित ।